Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

काव्यशास्त्रीय परंपरा में श्वेतांबर जैन आचार्य नमिसाधु-परिचय

डॉ. रागिनी श्रीवास्तव*

* असिस्टेंट प्रोफेसर (संस्कृत) शशि भूषण बालिका डिग्री कॉलेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना – 'साहित्य समाज का दर्पण है' यह उक्ति स्वंय में विशद अर्थ समेटे है।साहित्य ज्ञान विज्ञान का विषय है,एक नवीन सोच है, और समाज की झलक है। संस्कृति के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए, परंपरागत ज्ञान को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए साहित्य एक मजबूत स्तंभ है। साहित्य गंगा में सारे दर्शन समाहित होकर एक नवीन दृष्टि से साहित्य और समाज के हर पहलू का स्पर्श करते हैं। इसी क्रम में जैन दर्शन के आचार्यों ने भी हर पक्ष का स्पर्श किया है,चाहे वह धर्म हो,कला हो, संस्कृति हो, राजनीति हो,या साहित्य हो।

जैन धर्म अनेक संस्कृत आचार्यों से समृद्ध है, जैसे- स्वयंभू, पुष्पदंत, हेमचंद्र सूरि,शालिभद्र सूरि,आचार्य देवसेन,मुनिराम सिंह, विजयसेनसूरी, धनपाल, विनयचंद्र सूरि, सिद्धसेन, दिवाकर,महाकवि अभय, देव,अमरचंद्र सूरि,नयनचंद्र सूरी श्री आशाधर भट्ट, नमिसाधु आदि। जिन्होंने अपने ज्ञान चक्षुओं से साहित्य और उसके तत्वों का दर्शन किया और काव्यशास्त्र को नई दिशा प्रदान की। इस प्रकार एक सुदीर्घ परंपरा विद्यमान है जैन आचार्यों द्वारा साहित्य क्षेत्र में दिए गए बहुमूल्य योगदान की।

11वीं शताब्दी में जैन श्वेतांबर संप्रदाय के नमिसाधु प्रसिद्ध जैन आचार्य हैं। रुद्रट विरचित 'काव्यालंकार' पर नमिसाधु की टीका मूल पाठ के साथ प्रकाशित रूप में उपलब्ध है।काव्यालंकार के संपादकों श्री दुर्गा प्रसाद तथा श्री वासुदेव शर्मा महोदय ने ग्रंथ के प्रारंभ में नमिसाधु को श्वेतांबर जैन पंडित माना है।(काव्यालंकार रुद्रट भूमिका भाग डॉक्टर सत्यदेव चौधरी पृष्ठ 39)

नमिसाधु ने रूद्रट कृत काव्यालंकार के अंत में अपना अति संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है-

'थारापद्रपुरीयगच्छ तिलक:
पाण्डित्यसीमाभवत्-
सूरिभूरिगुणैकमन्दिरमिह श्रीशालिभद्राभिध: ।
तत्पादाम्बुजषटपदेन नमिसा संक्षेपसंप्रेक्षिण:
पुंसो मुग्धधियोऽधिकृत्य रचितं सटिप्पणं लहवद:।'
(रुद्रट काव्य अलंकार नमिसाधु टीका पृष्ठ 430)

प्रस्तुत पद्य से ज्ञात होता है कि शालिभद्र थारापद्रपुरी के गच्छ (सम्प्रदाय) के तिलकस्वरूप, अनेक गुणों के आवास तथा पाण्डित्य की सीमा थे जिनके चरण कमलों के भ्रमर नमिसाधु ने संक्षेपप्रिय, मुग्धबुद्धि पुरुषों को लक्ष्य करके इस लघु टिप्पण की रचना की है।

नमिसाधु के विषय में उनके द्वारा उल्लिखित स्थान, आचार्यादि के विषय में भी विवेचन करना आवश्यक प्रतीत होता है।नमिसाधु ने थारापद्रपुरीयगच्छ का प्रयोग किया है जिसकी पृष्ठभूमि का विवेचन इस प्रकार है-यह प्राचीन जैन तीर्थ है जो वर्तमान में थराड़ है। इसका जैन ग्रन्थ तीर्थमाला चौत्यवंदन में इस प्रकार उल्लेख है-

'थारापद्रपुरे च वाविहपुरे कासद्रहे चेऽरे।'
(ऐति.स्थान पृष्ठ 420)

यह राधनपुर के पास है। इस नगरी के प्राचीन नाम थिरपुर, थिरादि, थरापद्र, थिरापद्र थे। यह गाँव थिरपाल धरु ने वि.सं. 1.1 में बसाया था। वि.की 7वीं सदी तक यहाँ थिरपाल धरु के वंशजों ने राज्य किया। बाद में नाडोल के चौहाण वंशजों ने राज्य किया। विक्रम की लगभग 9वीं सदी में थिरपद्रगच्छ की स्थापना हुई मानी जाती है।(तीर्थ दर्शन द्वितीय खंड)

प्राक् मध्ययुगीन तथा मध्यकालीन निर्ग्रन्थदर्शन के श्वेताम्बर आम्नाय के गच्छों में थारापद्रगच्छ का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। थारापद्र नामक स्थान से इस गच्छ का प्रादुर्भाव हुआ। थारापद्र गच्छ के 11वीं शताब्दी के प्रारम्भिक आचार्य पूर्णभद्रसूरि ने चन्द्रकुल के बटेश्वर क्षमाश्रमण को अपना पूर्वज बताया है, किन्तु इस गच्छ के प्रवर्तक कौन थे, यह गच्छ कब अस्तित्व में आया। इस विषय में कुछ नहीं कहा है। इस गच्छ में वादिवेताल शांतिसूरि शालिभद्र अपरनाम शीलभद्रसूरि (प्रथम) शांतिभद्रसूरि, पूर्वभद्र सूरि, शालिभद्र द्वितीय, नमिसाधु आदि कई प्रभावक और विद्वान आचार्य हुए हैं।(Nirgranth-Vol.1Ahemdabad 1996)

वि.सं. 1.84 / ई.स. 1.28 का रामसेन के आदिनाथ जिनालय स्थित प्रतिमाविहीन परिकर का लेख थारापद्रगच्छ का उल्लेख करने वाला सर्वप्रथम अभिलेखीय साक्ष्य है,पं.अम्बालाल शाह ने उक्त लेख की वाचना इस प्रकार की है। इस लेख में थारापद्रगच्छ के सूरिवरों की दीर्घ सूची दी गयी है जो इस प्रकार है-

वटेश्वर
↓
ज्येष्ठाचार्य
↓
शांतिभद्रसूरि (प्रथम)
↓
सिद्धान्तमहोदधि सर्वदेवसूरि
↓
शालिभद्रसूरि(प्रथम) (शीलभद्रसूरि)

↓

शांतिभद्रसूरि (द्वितीय)

↓

पूर्णभद्रसूरि

(रामसेन स्थित जिनालय में प्रतिमा प्रतिष्ठापक)

थारापद्रगच्छ से सम्बद्ध कालक्रम में द्वितीय प्रमाण है वि.सं. 111. / ई.स. 1.54 में आचार्य पूर्णमद्रसूरि द्वारा प्रतिष्ठापित अजितनाथ की प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख । वर्तमान में यह प्रतिमा अहमदाबाद में झवेरीबाड के एक जिनालय में है। इस लेख की वाचना एन.सी. मेहता ने की है। इन साक्ष्यों के माध्यम से थारापद्रगच्छ के मुनिजनों के गुरुपरम्परा की तालिका बनायी जा सकती है, जो इस प्रकार है–

बटेश्वरसूरि

↓

ज्येष्ठाचार्य

↓

शांतिभद्रसूरि (प्रथम)

↓

सर्वदेवसूरि

↓

शालिभद्र (प्रथम)

(शीलभद्र)

↓

शांतिभद्र (द्वितीय)

↓

पूर्णभद्रसूरि

↓

शालिभद्रसूरि (द्वितीय)

↓

नमिसाधु

(विं.सं. 1122/ई.स. 1.65 में षडावश्यकसूत्रवृत्ति तथा वि.सं. 1125 / ई.स. 1.68 में काव्यालङ्कार टिप्पण के रचनाकार)

इस प्रकार साहित्य स्रोतों के अनुसार थारापद्रगच्छ के नमिसाधु द्वारा प्रणीत दो कृतियाँ हैं–

1. षडावश्यक सूत्रवृत्ति (वि.सं. 1122 / ई.स. 1.65)
2. काव्यालङ्कार टिप्पण (वि.सं. 1125 / ई.स. 1.68)

उक्त रचनाओं की प्रशस्तियों में ग्रन्थकार ने स्वयं को थारापद्रगच्छीय शालिभद्र का शिष्य कहा है–

शालिभद्रसूरि (द्वितीय)

↓

नमिसाधु

इसी गच्छ के शालिभद्र सूरि ने सटीकबृहत्संग्रहणीप्रकरण की रचना को और अपनी गुर्वावली इस प्रकार दी है–

शालिभद्रसूरि

↓

पूर्णभद्रसूरि

↓

शालिभद्रसूरि (सटीकबृहत्संग्रहणी प्रकरण के रचनाकार)

रामसेन जिनालय में उल्लिखित पूर्णभद्रसूरि तथा सटीकबृहत्संग्रहणीप्रकरण के कर्त्ता शालिभद्रसूरि के गुरु पूर्णभद्रसूरि सम्भवत: एक ही व्यक्ति हैं। रामसेन के लेख (111.) तथा बृ.सं.प्र. की रचनामिति वि.सं. 1139 है जिनके बीच 28 वर्षों का अन्तर है। इससे भी पूर्णभद्रसूरि की अभिन्नता प्रतीत होती है। इसी प्रकार वि.सं. 1122 और वि.सं. 1125 में षडावश्यकसूत्रवृत्ति और काव्यालङ्कार टिप्पन के रचनाकार नमिसाधु के गुरु शालिभद्रसूरि भी बृहत्संग्रहणीप्रकरण के कर्त्ता शालिभद्रसूरि से अभिन्न ही प्रतीत होते हैं।

इस विवेचन से नमिसाधु की गुर्वावलि इस प्रकार प्रतीत होती है–

पूर्णभद्रसूरि

↓

शालिभद्रसूरि

↓

नमिसाधु

उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष प्रतीत होता है कि नमिसाधु ने अपने गुरु के रूप में शालिभद्र (द्वितीय) को स्वीकार किया है। इसके अतिरिक्त एक ऐसा अन्य प्रमाण भी रुद्रट कृत काव्यालङ्कार में नमिसाधु द्वारा की गयी प्रशस्ति से प्राप्त किया जा सकता है कि जहाँ नमिसाधु द्वारा प्रस्तुत शालिभद्र सम्बन्धी पद्य अजितनाथ की प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख से अत्यधिक साम्य रखता है तथा सम्भवत: नमिसाधु ने उसी पद्य को अपनी अपनी रुचि अनुसार प्रस्तुत किया–

थारापद्रपुरीयगच्छगगनोद्योतक भास्वान्भूत सूरि रू
सागरसीम विश्रुतगुण: श्रीशालिभद्राभिध: ।।

(अजीत नाथ प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख, ए.एम.जे.आई.ए. पृष्ठ 72–74)

थारापद्रपुरीयगच्छतिलक पाण्डित्यसीमाभव–
त्सूरिभूरिगुणैकमन्दिमिह श्रीशालिभद्राभिध:।।

(काव्यालंकार रुद्रट नमिसाधु टीका पृष्ठ 427)

यद्यपि इस विवेचन से नमिसाधु की गुरु परम्परा का तो ज्ञान हो जाता है तथापि साहित्य स्रोतों से भी उनके जीवन वृत्ता से सम्बन्धित अन्य कोई भी तथ्य प्राप्त नहीं हो सका है। नमिसाधु की टीका से ज्ञात होता है कि इन्होंने काव्यालंकार ग्रंथ की टीका विक्रमी संवत 1125 में वर्षा ऋतु में समाप्त की है। (काव्यालंकार रुद्रट पृष्ठ 430)

अत: नमिसाधु का स्थितिकाल 11वीं शताब्दी स्वीकार किया जाना चाहिए।

साहित्यशास्त्र की दृष्टि से नमिसाधु उच्चकोटि के पण्डित थे। उनका अलङ्कार शास्त्र पर गम्भीर अध्ययन था। उनकी टीका सङ्क्षिप्त होने पर भी अभिधेयार्थ को स्पष्ट करने में पूर्णतया सक्षम है। उनकी टीका तत्कालीन अनेक साहित्यिक ग्रन्थों, नाटकों, महाकाव्यों के उदाहरणों से संवलित है। ग्रन्थकार के मत की स्थापना के लिए पूर्व प्रचलित मतों का खण्डन भी नमिसाधु ने अत्यन्त पटुता से किया है।

नमिसाधु ने काव्यालङ्कार पर टिप्पणी करने से पूर्व जैन सम्प्रदाय में समान रूप से मान्य प्रथम तीर्थङ्कर (आदिदेव ऋषभदेव) नाभेय देव की स्तुति कर मङ्गलाचरण परिपाटी का अनुपालन किया है–

निरूशेषापि त्रिलोकी विनयफरतया.....

(काव्यालंकार,रुद्रट नमिसाधु टीका पृष्ठ–1)

काव्यालङ्कार पर अपनी टीका करने के पूर्व नमिसाधु ने पूर्वमहामतियों की वृत्ति को प्रमाण मानते हुए अपनी सक्षिप्त टीका पद्धति का भी विवेचन किया है। किसी भी टीका में यथासम्भव तीन गुणों का होना अपेक्षित है यथा– मूलपाठ को सरल रूप में प्रस्तुत किया जाये, यदि कहीं अभाव हो तो उसे पूर्ण किया जाये तथा विवेच्य आचार्य का समर्थन किया जाये अथवा कहीं वैमत्य प्रदर्शन करना हो तो तर्कसङ्गत रूप में किया जाये। इस दृष्टि से नमिसाधु की टीका निश्चित रूप से सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होती है।

नमिसाधु ने अपनी टिप्पणी में सर्वत्र रुद्रट के आशय को स्पष्ट करने का प्रयास किया है जिसके आधारभूत तत्त्व के रूप में उन्होंने पर्यायवाची तथा विग्रह पद्धति का ग्रहण किया है यथा–'अस्य हि पौर्वापर्य पर्यालोच्यचिरेणे निपुणस्य। काव्यमलंकर्तुमलंकुर्तदारा मति भवति।।'(रुद्रट काव्य अलंकार पृष्ठ –1)

नमिसाधु ने प्रस्तुत पद्य में प्रयुक्त पदों की पर्यायवाची, विग्रहरूपेण व्याख्या कर आचार्य रुद्रट के मूल आशय को सरल रूप में स्पष्ट किया है–

अस्य काव्यालंकारस्य ।
हि शब्दोयस्मादर्थे।
यस्मात् पौर्वापर्य हेतुहेतुमद्भावम् ।
हेतुरेष ग्रन्थ: ।
हेतुमन्तोऽलंकारा: ।
हेतुकार्ययोश्च पौर्वापर्य सिद्धमेव ।
अथवाद्यन्तोदितग्रन्थार्थ पर्यालोच्यवगत्य, आचरेण शीघ्रमेव, निपुणस्य प्रवीणस्य काव्यं कविभावम्, अलंकर्तुमलंकारसमन्वितं विधातुम्, कर्तु: कर्वे, उदारा स्फारा योग्या वा, मतिर्भवति बुद्धिर्जायते। तस्मात्सप्रयोजनमिदमलंकारकरणमिति ।।
(काव्यालंकार,रुद्रट पृष्ठ –4)

नमिसाधु ने आचार्य के आशय को स्पष्ट करने में जहाँ पूर्वाचार्यों के मतों का तर्कपूर्ण खण्डन किया, वहीं परम्परा को भी प्रमाण माना । यथा – वृत्ति विवेचन में रुद्रट ने अनुप्रासगत पाँच वृत्तियों को स्वीकार किया है(काव्यालंकार रुद्रट 2/19)

जबकि रुद्रट से पूर्ववर्ती आचार्य उद्भट ने तीन वृत्तियों को स्वीकार किया तथा प्राकृत आचार्य हरि ने भी आठ वृत्तियों को स्वीकार किया है। टीकाकार की कसौटी पर खरे सिद्ध होते हुए नमिसाधु ने रुद्रट की पाँच वृत्तियों का अनुमोदन करते हुए जहाँ उद्भट के मत का खण्डन किया वहीं हरि द्वारा उक्त आठ वृत्तियों में अतिव्याप्ति को स्वीकार कर वहीं उनका भी निरास कर दिया।(काव्यालंकार रुद्रट 2/19 नमिसाधु टीका)

नमिसाधु ने अपनी टीका में पूर्वपरम्परा का भी यथासम्भव ग्रहण किया है। नमिसाधु ने रुद्रट द्वारा विवेचित अर्थ प्रसङ्ग में पूर्व महाकवियों की परम्परा को स्वीकार किया है। उनका कथन है कि यद्यपि अन्यथा वर्णन निषिद्ध होता है परन्तु यदि महाकवियों द्वारा उसका कथन किया गया है तो उसे प्रसिद्धि के कारण ही स्वीकार करना चाहिए क्योंकि महाकवियों की प्रसिद्धि ही इस विषय में प्रमाण होती है।(का.रु.7/8नमिसा.टीका पृष्ठ 189.)

इसी प्रकार नमिसाधु ने रुद्रट कृत काव्यालङ्कार की टीका करते समय पूर्वाचार्यों के मतों का निरास भी तर्कसङ्गत रूप में करते हुए आचार्य रुद्रट के मत को ही पुष्ट किया है। यथा– काव्य हेतु विवेचन प्रसङ्ग में रुद्रट का कथन है कि प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति को सुकवि के चरणों में नक्तंदिनम् अभ्यास करना चाहिए।(का.रु.1/2.)

टीकाकार नमिसाधु ने 'नक्तंदिनम्' पद की विवेचना से यह प्रश्न उठाया कि रुद्रट ने इस पद का प्रयोग क्यों किया? चिन्तन–मनन के पश्चात् समाधान रूप में नमिसाधु ने रुद्रट के पूर्ववर्ती वामन के मत 'पश्चारात्रे एव' की सत्ता इस प्रकरण में स्वीकार की और तर्कसङ्गत रूप से उनके प्रति वैमत्य प्रदर्शित करते हुए कहा कि जैसा कि कहा गया है कि रात्रि के पश्चाद् भाग में ही अभ्यास करना चाहिए, यह उचित नहीं है क्योंकि नक्तं दिन अर्थात् जब भी समय मिले और बुद्धि तीक्ष्ण हो तभी अभ्यास करना चाहिए।(का.रु.नमिसा.टी. पृष्ठ 14)

इसी प्रसङ्ग में नमिसाधु की निष्पक्षता भी प्राप्त होती है। यद्यपि यह स्वयं जैनाचार्य हैं तथापि इन्होंने रुद्रटोक्त काव्य हेतु प्रसङ्ग में जैन आचार्य जयदेव को उनके अभाव के साथ उद्धृत किया कि महाकवियों के काव्यों में ऐसे छन्द भी प्राप्त होते हैं जिनका विवेचन जयदेवादि ने नहीं किया है।(का.रु.1/2.नमिसा.टी. पृष्ठ 14)

नमिसाधु की निष्पक्ष टीका पद्धति का इसके अतिरिक्त और क्या प्रमाण हो सकता है? इसी क्रम में रुद्रटकृत रस विवेचन प्रसङ्ग में आचार्य भरत द्वारा मान्य आठ रसों का उल्लेख करते हुए नमिसाधु का कथन है कि जहाँ भरत ने सहृदय के आवर्जकत्त्व के आधार आठ या नव रसों को ही स्वीकार किया है वहीं रुद्रट ने दस रसों को स्वीकार करने के साथ ही आस्वद्यता को प्राप्त होने वाली किसी भी चित्तावृत्ति को रसरूप में मान्यता प्रदान की है।(नमिसा.टी. पृष्ठ375)

प्रस्तुत प्रसङ्ग में नमिसाधु की निष्पक्षता रुद्रट के आशय का समर्थन तथा महत्त्व प्रदान करने के परिप्रेक्ष्य में परिलक्षित होती है।

इस प्रकार नमिसाधु की टीका रुद्रट के मूल अर्थ को समझने के लिए अत्यधिक उपयोगी है। विशेषत: अनुप्रास, यमक, श्लेष, चित्र, अर्थश्लेष अलङ्कारों के उदाहरणों को समझने के लिए नमिसाधु की टीका अत्यन्त आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण है जहाँ उन्होंने रुद्रटोक्त कारिका के प्रत्येक पद का अत्यन्त सरस रूप में विश्लेषण किया है।

नमिसाधु को ग्रन्थ के वर्ण्यविषय का पर्याप्त ज्ञान है अत: इन्होंने आचार्य के मत को स्पष्ट करने के लिए अनेक ग्रन्थों, कवियों, आचार्यों तथा उनके उदाहरणों प्रत्युदाहरणों को प्रस्तुत किया है चाहे वो प्रसङ्ग रस(1) का हो, काव्यभेद(2)का हो अथवा काव्यहेतु(3) का हो पद।(1–का.रु.13/5, 2–वही नमिसा.टी. पृष्ठ 395, 3–वही नमिसा.टी. पृष्ठ 14)

नमिसाधु ने रुद्रट के विचारों को पुष्ट करने के लिए अनेक आचार्यों कवियों दण्डी, मेधाविरुद्ध, भामह, जयदेव, पाणिनि, भारवि, यास्क, उद्भट, कालिदास तथा माघ आदि का नामत: उल्लेख किया है।

वस्तुत: नमिसाधु ने सर्वत्र रुद्रट का अनुगमन किया है। अपनी टीका के माध्यम से उन्होंने रुद्रट को सूत्रकार कहा है, जिससे सम्भवत: स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने रुद्रट द्वारा सूत्ररूप में उक्त विचारों की व्याख्या करने के लिए विस्तृत आधार का ग्रहण किया है।(का.रु.6/9 नमिसा.टी. पृष्ठ 155) यथा– जहाँ उन्होंने कवियों, आचार्यों को प्रमाण रूप में स्वीकार किया वहीं वैयाकरणों का भी स्पष्टत: उल्लेख कर अपने व्याकरण विद्धता को भी प्रस्तुत किया है।

सङ्क्षेप में नमिसाधु ने अपनी टीका पद्धति में कुछ आधारों पर रुद्रट के मत की व्याख्या की हैकृमौनं स्वीकारं लक्षणं के आधार पर मौन समर्थन(का.रु.12/43नमिसा. टी. पृष्ठ 385)

जिस अंश से प्रभावित हैं उसका विशद विवेचन
(का.रु.1/2.नमिसा.टी पृष्ठ 14)

जैन धर्मावलम्बी होने के कारण सङ्क्षिप्त व्याख्या(का.रु.14/18नमिसा. टी. पृष्ठ संख्या399)और जो विषय पूर्वाचार्यों की मान्यताओं व रुद्रट की विचारधारा के अनुरूप तथा सुस्पष्ट हैं उनका शब्दत: समर्थन।(का.रु.7/2नमिसा.टी. पृष्ठ184)

अब यदि यह प्रश्न उठाया जाये कि नमिसाधु द्वारा जैन धर्मावलम्बी होने पर भी रुद्रट कृत 'काव्यालङ्कार' की टीका करने का क्या कारण हो सकता है? इसके समाधान रूप में कई हेतुओं को स्वीकार किया जा सकता है। यथा- रुद्रट कृत काव्यालङ्कार में संधिकाल के ऐसे विषय बीजरूप में विद्यमान थे जो परवर्ती परम्परा में विकसित हुए अथवा सम्प्रदायरूप में उदित हो गये। यथा-ध्वनि, औचित्यादि। इसके अतिरिक्त नमिसाधु ने इस ग्रन्थ में नाट्य तथा काव्यधारा का सुन्दर सामञ्जस्य भी देखा कि एक अलङ्कारवादी आचार्य द्वारा जहाँ एक ओर रस सङ्ख्या वृद्धि की गयी वहीं दूसरी ओर अर्थालङ्कारों का विभाजन भी नियमगत रूप में किया गया और सम्भवत: यही मुख्य कारण रुद्रट काव्यालङ्कार पर नमिसाधु द्वारा टीका करने के मूल हेतु के रूप में स्वीकार किया चाहिए।

अन्तत: नमिसाधु कृत टीका काव्यालङ्कारगत रुद्रट के मूल आशय को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक साधनभूत है। नमिसाधु टीका के महत्तवपूर्ण योगदान के रूप में यह स्वीकार किया जा सकता है कि इनकी टीका से संवलित होकर काव्यालङ्कार गत वर्ण्यविषय को विशद आधार ही मिला है।

नमिसाधु ने रुद्रट द्वारा प्रस्तुत भावभूमि पर अधिष्ठित होकर उनकी विशेषताओं को हृदयङ्गम करते हुए सर्वथा सरल व ग्राह्य रूप में प्रस्तुत किया है। नमिसाधु ने अपने टीका करने के प्रयोजन का भी उल्लेख किया है कि इस प्रकार रुद्रट प्रणीत 'काव्यालङ्कार' पर टीका करने से मैंने जो पुण्यलाभ किया है, उसके फलस्वरूप मेरा मन परोपकार में अनुराग रखने वाला हो, यही मेरी अभिलाषा है-

'एवं रुद्रटकाव्यालङ्कृतिटिप्पणकविरचनात्पुण्यम।
यदवापि मया तस्मान्मन: परोपकृतिरति भूयात् ।।'
(का.रु.नमिसाधु टीका पृष्ठ 429)

नमिसाधु के इस कथन का आशय इस प्रकार माना जा सकता है कि जो विशेषताएं रुद्रट के काव्यालङ्कार में प्रच्छिन्न रूप में विद्यमान थी उनको सहृदय सामाजिक के समक्ष सरल रूप में प्रस्तुत करके नमिसाधु ने रुद्रट का उपकार ही किया है क्योंकि परोपकार ही सहृदयों का मुख्य गुण होता है और नमिसाधु की सहृदयता तो उनकी टीका पद्धति से ही सिद्ध प्रतीत होती है।

सर्वथा सरस तथा सरल टीका करने पर भी नमिसाधु ने अपनी टीका के अन्त में सहृदयता का परिचय देते हुए विद्धत्समाज से अज्ञानवश भ्रांतिपूर्ण व्याख्या के लिए क्षमा प्रार्थना की है-

अज्ञानाद् यद्धितथं विवृत्तां किमपीहतन्महामतिभि: ।
संशोधनीयमखिलं रचिताञ्जलिरेष याचेऽहम् ।।
(का.रु. पृष्ठ43.)

नमिसाधु का यह कथन उन्हें उच्चकोटि के टीकाकार की श्रेणी में स्थापित करने में पूर्णतरू सक्षम है। नमिसाधु की टीका काव्यालङ्कारगत गुणों की विवेचक, प्रकाशक तथा विश्लेषक है।

अंतत: कहना उचित ही प्रतीत होता है कि नमिसाधु काव्य शास्त्रीय परंपरा में उच्च कोटि के आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. जैन साहित्य का वृहद इतिहास- भाग 5 (पंडित अंबा शाह)
2. जैन साहित्य का वृहद इतिहास (डॉ.गुलाबचंद चौधरी)
3. जैन आचार्य का अलंकार शास्त्र में योगदान (डॉ.कमलेश जैन)
4. तीर्थ दर्शन द्वितीय खंड
5. जैनेंद्र सिद्धांत कोष (जिनेंद्र वर्णी)
6. संस्कृत काव्यशास्त्र इतिहास (डॉ. सुशील कुमार डे)
7. संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास (श्री पी.वी.काणे)
8. रुद्रट काव्यालंकार (पंडित रामदेव शुक्ल डॉक्टर सत्यदेव चौधरी)
9. Rudrata's
10. Kavyalankara-An Estimate(Dr.K. Leela Prakash)
11. तीर्थ दर्शन
12. Nirgranth volume 1
13. स्थूलिभद्र संदेश (श्री ललित कुमार नाहटा)

****